Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2025 SHISRRJ | Volume 8 | Issue 3
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

हठयौगिक साधना हेतु उपयुक्त स्थान एवं आहार, विहार का वर्तमान समय के परिपेक्ष में प्रासंगिकता

निधि,[1] डॉ.मीरा अंतिवाल,[2] प्रो.जय प्रकाश सिंह,[3] प्रांशु कुमार मौर्य[4]

1.शोधार्थी, पंचकर्म विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।
2.असिस्टेंट प्रोफेसर,कायचिकित्सा विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।
3.प्रोफेसर, पंचकर्म विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।
4.सहायक प्राध्यापक, योग विज्ञान विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, सांकरा, कुम्हारी, दुर्ग, छत्तीसगढ़।

Article Info
Accepted : 01 May 2025
Published : 20 May 2025

Publication Issue :
May-June-2025
Volume 8, Issue 3

Page Number : 101-111

शोधसार –हठयौगिक साधना के लिए हठयोग के ग्रंथो और उपनिषदों में प्राचीन समय में बताई गई साधनात्मक, गतिविधियों और नियम के साथ साथ उपयुक्त स्थान, कुटी निर्माण , आहार विहार, जल , भोजन, साधक, बाधक तत्व का वर्णन मिलता है। प्राचीन समय में विभिन्न सुविधाओं के अभाव के कारण हठयोग की साधना कठिन हुआ करती थी तथा प्राचीन समय की परिवेश तथा परिस्थितियों के आधार पर विभिन्न प्रकार के आहार , विहार ,गतिविधियों का निर्देश किया गया था जिनका पालन करने पर साधक को विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना भी करना पड़ता था तथापि योग साधक अपनी साधना को पूर्ण कर सफलता प्राप्त करते थे परंतु वर्तमान समय में विभिन्न प्रकार की सुविधा उपलब्ध है जिनका उपयोग करने से योग साधक को किसी भी प्रकार की समस्या नही होती तथा योग साधना को सरलतम रूप दिया जा सकता है प्राचीन सिद्धांतों का वर्तमान परिपेक्ष में पालन कर साधना में सरलतापूर्वक सफलता प्राप्त की जा सकती है हठयोग की साधना प्राचीन काल में जितनी लाभदायक थी वर्तमान में भी उतनी ही उपयोगी बनाई जा सकती है।वर्तमान समय के बदलते परिवेश के अनुसार नियमों को आग्रह करके हठयोग की साधना को अत्यंत सरल ढंग से सफल बनाया जा सकता है।

कूटशब्द – हठयोग, मठ (कुटी), आहार, विहार, साधक बाधक तत्व।

परिचय – योग भारत की प्राचीनतम वैदिक साधना पद्धति है जो कालांतर से वर्तमान समय में जीवन जीने के रूप में अति लोकप्रिय है। यह मानव की शारीरिक, मानसिक, अस्वस्थता को दूर कर आध्यात्मिक जीवन की ओर अग्रसर करता है जो योग की विभिन्न धाराओं हठयोग,राजयोग, कर्मयोग, भक्तियोग, मंत्रयोग के रूप में प्रचलित हैं। इनमे से हठयोग की साधना शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित है । यह हठयोग विद्या तंत्र शास्त्र से निकली परंपरा है जिसके प्रणेता भगवान आदिनाथ शिव जी है। हठयोग के ग्रन्थ

Copyright © 2025 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

हठप्रदीपिका, घेरण्ड संहिता और योग उपनिषदों में हठयोग विद्या का विस्तृत वर्णन मिलता है। यह हठयोग साधना हमारे दाएं और बाएं स्वर से सम्बंधित प्राणों पर आधारित साधना पद्धति है। जिसे सूर्य स्वर (पिंगला नाड़ी) के प्राण को तथा चंद्र स्वर (इड़ा नाड़ी) के प्राण को प्रणायाम के द्वारा एकीकरण करके सुषुम्ना नाड़ी में प्राणों को धारण करने को हठयोग के रूप में परिभाषित किया गया है जिसका उद्देश्य राजयोग की प्राप्ति है। राज योग की प्राप्ति तो होती ही है साथ ही विभिन्न हठयौगिक साधना करने पर विभिन्न रोगों से मुक्ति तथा स्वास्थ्य संवर्धन के साथ साथ अनेकों सिद्धियां भी मिलती है । जब उचित प्रकार से इनकी साधना को किया जाता है तो यह मोक्ष प्राप्ति में सहायक है। यदि अनुचित रीति से किए जाने पर यह हानिकारक भी हो सकती है। इस प्रकार उपनिषदों एवं योगिक ग्रन्थों में इस साधना हेतु उचित काल, स्थान, आहार एवं विहार के बारे में विस्तृत वर्णन किया गया है। जो साधना के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्राचीन समय की परिस्थिति एवं वातावरण के आधार पर ये स्थान , कुटी, मठ, आहार, आदि के सन्दर्भ में बताया गया था। परंतु प्राचीन की विधियों को पालन कर पाना वर्तमान समय में संभव नहीं है। इसका अर्थ यह भी नहीं है, कि वर्तमान में योग साधना नहीं की जा सकती अथवा सफलता नहीं मिलेगी। वर्तमान जीवन विज्ञान और भौतिक सुख साधनों से संपन्न है। जिसे वर्तमान समय के अनुसार प्राचीन काल की साधना विधियों का उपयोगिता लाभदायक सिद्ध हो सकती है। इसलिए प्राचीन समय की साधना विधिया वर्तमान परिपेक्ष्य में भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी प्राचीन समय में थी। उन विधियों और साधना पद्धति को प्रत्येक व्यक्ति द्वारा आसानी से आत्मसात करके लाभ लिया जा सकता है।

हठयोग की प्राचीन साधना की विधि, नियम ,आहार– विहार –विभिन्न प्रकार की साधनाओं के लिए अलग–अलग विधि विधान बताए गए हैं । किंतु हठयोग की साधना के लिए महर्षि घेरण्ड, स्वात्माराम सूरी के साथ साथ अन्य हठयौगिक ग्रंथो, उपनिषदों में साधना के लिए विभिन्न साधना आयामों का वर्णन किया गया है। जो प्राचीन समय पर आधारित थे। जिनको अपना कर प्राचीन समय में ऋषि मुनि और अन्य जिज्ञासु साधक साधना की पद्धतियों का उपयोग करके अपनी साधना को सफल बनाकर जीवन लक्ष्य की प्राप्ति करते थे। हठयोग साधना में उचित स्थान के विषय में निम्न बातें कही गई हैं। योग साधना हेतु स्वच्छ, शांत, एकांत तथा प्राकृतिक वातावरण का निर्देश किया गया है। जिससे साधना में कोई विघ्न उत्पन्न न हो । साधक को ऐसे वातावरण, स्थान, मठ का चयन करना चाहिए। जहां चित्त को स्थिर किया जा सके। जिसके सन्दर्भ में कहा गया है।

घेरंडसंहिता–

दूरदेशे तथाडरण्ये राजधान्यां जनांतिके। योगारम्भं न कुर्वीतं कृतश्चेत्सिद्धहा भवेत् ।– घेरण्ड संहिता 5/3

अविश्वासं दुरदेशो अरण्ये रक्षिवर्जितम् ।लोकारण्ये प्रकाशश्च तस्मात्राणि विवर्जियेत् ।।– घेरण्ड संहिता 5/4

सुदेशे धार्मिक राज्ये सुभिक्षे निरूप्रद्रवे।कृत्वा तमैकं कुटीरं प्राचीरेः परिवेष्टितम् ।।– घेरण्ड संहिता 5/5

वापी कूपतड़ागं च प्रचीर मध्यवर्त्ति च।नात्युच्चं नातिनिम्नं च कुटीरं कीट वर्जितम् ।।

साम्यग्गोमयलिप्तं च कुटीरं तत्र निर्मितम्।एवं स्थानेषु गुप्तेषु प्राणायामम् सम्प्पसेत् ।।– घेरण्ड संहिता 5/6,

ऐसे सुंदर स्थान हो, जो धार्मिकता से पूर्ण हो तथा उपद्रव से रहित तथा जहां पर आहार की व्यवस्था सरलता से की जा सके। जहां भरपूर मात्रा में खाद्य पदार्थ उपलब्ध हो ऐसे स्थान पर साधक को एक कूटी का निर्माण करे, जो चारों ओर से घिरी हो तथा जो कोलाहल से रहित हो । दूर देश और घने वनों, में साधना हेतु मठ (कुटी) का निर्माण नहीं किया जाना चाहिए। क्योंकि परदेश में लोगो के प्रति विश्वसनीयता

कम होती है। अपरिचित वातावरण में तथा सघन वनों के मध्य जंगली पशुओं शेर, भालू ,हाथी आदि का भय होता है। तथा अधिक शोर गुल अर्थात ऐसे वातावरण जहां लोगों का आना–जाना निरंतर लगा रहता हो, साधना में बाधक होती है। वहा साधना हेतु स्थान का चयन नही करे। अतः उपयुक्त प्रकार से मठ हेतु स्थान चयन किया जाना चाहिए । जहां निरंतर सात्विक ऊर्जा प्रवाहित हो मठ के आसपास जलपान की व्यवस्था हो। जल वातावरण में शीतलता तथा सौम्यता का प्रसार करने में सहायक है। कुटी हेतु वहां कूटी की भूमि समतल होनी चाहिए, अधिक ऊंची व नीचे नहीं होनी चाहिए तथा वह स्थान कीट पतंग से रहित होना चाहिए, साथ ही साथ गाय के गोबर से उस भूमि का लेपन किया जाना चाहिए।

हठप्रदीपिका–

सुराज्ये धार्मिक देशें सुभिक्षे निरूपद्रवे। धनु प्रमणपर्यतं शिलाग्नि जल वर्जिते ।
एकान्ते मण्किामध्ये स्थातव्यं हठयोगिना ।।– हठप्रदीपिका 1/12
अल्पद्वारमरन्ध्रगर्तविवरं नात्युच्चनीचायतम् ।साम्यग्गोमयसान्द्रलिप्तममलं निःशेषजन्तूज्झितम् ।।
बाहये मण्डपवेदिकूपसचिरं प्रकारसंवेष्टितम् ।चोक्तं योगमठस्य लक्षणमिदं सिद्धैर्हठाभ्यासिभिः ।। हप्र. 1/12,13,14

स्वामी स्वत्मराम जी ने बताया है कि ऐसे राज्य जहां की संस्कृति, राजा एवं प्रजा सभी धार्मिक प्रवृत्ति के हो जहां से भोजन आसानी से प्राप्त हो जाए तथा कोलाहल से रहित ऐसे स्थान पर कुटी बनाकर साधक को रहना चाहिए तथा यह ध्यान रखना चाहिए। कि कुटी के चार तरफ चार हाथ की दूरी पर पत्थर, अग्नि तथा जल नहीं होना चाहिए। अग्नि होने पर धुएं भी होगा और आग से जलने की संभावना होती है तथा वातावरण प्रदूषित होगा ,जल में मगर आदि मौजूद जीव जंतुओं जो बाधक हो सकते हैं अतः उचित दूरी आवश्यक है। बड़े जीवो से रक्षा हेतु कुटी का द्वारा छोटा रखना बताया गया है। जिसमें साधक सरलता से प्रवेश कर सके वह कुटी सांप , चूहे आदि जीवों के बिल से रहित होने चाहिए। अन्य कीट पतंग से रहित होना चाहिए जिसके लिए गाय के गोबर से उसे भूमि का लेपन किया गया हो। मठ के बाहर वेदी तथा मंडप का निर्माण किया जाना चाहिए। जिस पर यज्ञ कर वहां के वातावरण को शुद्ध तथा सकारात्मकता से पूर्ण किया जा सके। उचित प्रकार से प्रकाश तथा जल की व्यवस्था हो ऐसे स्थान का चयन किया जाना चाहिए।

योग तत्व उपनिषद् के अनुसार स्थान–

प्राणायामं ततः कुर्यात्पद्यासनगतः स्वयम्। सुशोभनं मठं कुर्यात्सूक्ष्मद्वारं तु निव्रणम्।।32
सुष्ठ लिप्त गोमयेन सुधया वा प्रयत्नतः । मत्कुणैर्मशकैलूतैर्वज्जितं च प्रयत्नतः।। 33 ।।
दिन दिने च संमृष्टं संमार्जन्या विशेषतः । यासितं च सुगन्धेन धूपितं गुग्गुलादिभिः ।। 34 ।।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ।तत्रोपविश्य मेधावी पद्मासनसमन्वितः।। 35।।

प्राणायाम योग क्रिया के पूर्व एक सुंदर मठ का निर्माण करना बताया गया है। जिसका द्वार छोटा हो तथा वह भूमि छिद्र वाली नहीं होनी चाहिए विभिन्न प्रकार के जीव मच्छर ,खटमल आदि से बचाव हेतु कुटी की सतह को गाय के गोबर से अच्छी प्रकार लेपन कर स्वच्छ वातावरण का निर्माण किया जाना चाहिए। वहां की भूमि समतल हो यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि प्रत्येक दिवस इस स्थान की सफाई तथा साथ ही कुटी को धूप, गुग्गुल आदि से सुगंधित रखना चाहिए।

योग कुंडलिनी उपनिषद के अनुसार–

पवित्रे निर्जने देशे शर्करादिविवर्जिते । धनुः प्रमाणपर्यते शीताग्निजलवर्जिते ।। 22 ।।
पवित्रे नात्युच्चनीचे ह्यासने सुखदे सुखे । बद्धपद्मासनं कृत्वा सरस्वत्यास्तु चालनम्।। 23 ।।
मठ हेतु समतल भूमि जहां कंकड़, पत्थर ना हो तथा आसपास अग्नि तथा जल, शीत आदि ना हो वह स्थान पवित्र एवं एकांत हो ऐसे स्थान को योग क्रिया हेतु उपयुक्त बताया गया है।

श्वेतास्वतर उपनिषद के अनुसार स्थान – समे शुचौ शर्करावह्निवालुकाविवर्जिते शब्दजलाश्रयादिभिः। मनोनुकूले न तु चक्षुपीडने गुहानिवाताश्रयणे प्रयोजयेत् ।। 2/10

किसी ऐसे गुहा में जहां पर स्थान स्वच्छ हो समतल भूमि कोलाहल रहित तथा बालू ,अग्नि, जल से रहित स्थान जो मन के अनुकूल हो तथा वह आतप से रहित (नेत्रों को पीड़ा न देने वाला)हो ऐसे स्थान का चयन योग साधना हेतु किया जाना चाहिए।

आहार एवं विहार–हठयोग साधना हेतु जितना महत्वपूर्ण स्थान एवं काल का महत्त्व है, उतना ही महत्वपूर्ण आहार व विहार को भी माना गया है। योग साधना करते हुए आहार एवं उचित प्रकार से विहार करना चाहिए तभी साधना में सिद्धि शीघ्र मिलती है। अन्यथा साधना बाधित हो जाती है। अतः एक साधक को उपयुक्त आहार विहार का पालन किया जाना चाहिए जो निम्न ग्रन्थों में बताया गया है

योग तत्व उपनिषद् के अनुसार –

लवणं सर्वपं चाम्लमुष्णं रूक्षं च तीक्ष्णकम्। शाकजातं रामठादि वह्निस्त्रीपथसेवनम् ।। 47 ।।
प्रातः स्त्रानोपवासादिकायक्लेशांश्च वर्जयेत् ।अभ्यासकाले प्रथमं शस्तं क्षीराज्यभोजनम् ।। 48 ।।
गोधूममुद्रशाल्यत्नं योगवृद्धिकरं विदुः । ततः परं यथेष्टं तु शक्तः स्याद्वायुधारणे।। 49 ।।

अर्थात नमक ,तेल ,खटाई , गरम, रुख, तीखा , भोजन, हरा साग, हींग आदि मसाले का सेवन निसिद्ध बताया गया है। अभ्यास की प्रारंभ अवस्था में दूध, घृत भोजन को सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। गेहूं ,चावल आदि का भोजन योग साधना मार्ग में सफलता प्रदान करता है।

विहार– आग का सेवन,स्त्री प्रसंग, अधिक चलना ,प्रातः काल स्नान ,उपवास तथा शरीर को पीड़ा देने वाले व्यवहारों का त्याग कर देना चाहिए।

योग चूड़ामणि उपनिषद् के अनुसार आहार –

अङ्गानां मर्दनं कृत्वया भ्रमसंजातवारिणा । कट्यम्ललवणत्यागी क्षीरभोजनमाचरेत् ।। 41 ।।
ब्रह्मचारी मिताहारी योगी योगपरायणः। अब्दादूर्ध्व भवेत्सिद्धो नात्र कार्या विचारणा ।। 42 ।।
अङ्गानां मर्दनं कृत्वया भ्रमसंजातवारिणा । कट्यम्ललवणत्यागी क्षीरभोजनमाचरेत् ।। 41 ।।
ब्रह्मचारी मिताहारी योगी योगपरायणः। अब्दादूर्ध्व भवेत्सिद्धो नात्र कार्या विचारणा ।। 42 ।।

अर्थातः– ब्रह्मचारी और मिताहार वाला योगी यदि योग के अभ्यास में लग जाए, तो एक वर्ष में ही योग की सिद्धि प्राप्त कर सकता है , इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए।

सुस्निग्धमधुराहारश्चतुर्थांशविवर्जितः । भुञ्जते शिवसंप्रीत्या मिताहारी स उच्यते ।। 43 ।।

कड़वे, खट्टे, तथा लवण युक्त पदार्थ का परित्याग करना बताया गया है। दूध एवं दूध से निर्मित पदार्थ का सेवन लाभकारी है। मिताहार के विषय में बताया गया है कि साधक को मधुर और स्निग्ध भोजन ही ग्रहण किया जाना चाहिए । आधा पेट भोजन तथा शेष भाग जल एवं वायु हेतु रिक्त रखकर भगवान को समर्पित कर भोजन ग्रहण किया जाना चाहिए। इसी प्रकार का वर्णन योगकुण्डल्युपनिषद् में भी किया गया है।

योगकुण्डल्युपनिषद् के अनुसार–

एतेषां लक्षणं वक्ष्ये शृणु गौतम सादरम् ।सुस्त्रिधमधुराहारश्चतुर्थांशविवर्जितः।। 3 ।।
भुज्यते शिवसंप्रीत्यै मिताहारः स उच्यते । आसनं द्विविधं प्रोक्तं पद्मं वज्रासनं तथा ।। 4 ।।

हठरतनावली एवं हठप्रदीपिका के अनुसार आहार–

सुस्निग्धमधुराहारश्वतुर्थांश विवर्जितः । भुज्यते शिवसंप्रीत्यै मिताहारः स उच्यते ॥ 1/ 58 ।।

स्निग्ध, मधुर, भोजन को आधा पेट ग्रहण कर आधा भाग जल एवं वायु के लिए रिक्त रखकर भगवान को अर्पण कर ग्रहण किया जाना चाहिए।

अपथ्य – कट्वम्लतीक्ष्णलवणोष्णहरीतशाकसौवीरतैल तिलसर्षप– मद्यमत्स्यान् ।

आजादिमांसद धितक्रकुलत्थकोलपिण्याक हिंगलशुना यमपथ्यमाहुः ।।1/ 59 ॥

भोजनमहितं विद्यात्पुनरस्योष्णोकृतं रूक्षम् ॥ अतिलवणमम्लयुक्तं कदशनशाकोत्कटं वर्ज्यम् । 1/60

कटु, अम्ल, खट्टा, नमकीन, गर्म, हरा साग, खट्टी भाजी, तेल, तिल, सरसों, मछली, मद्य, बकरा आदि का मांस, तक्र, कुलत्थी, हींग, लहसुन आदि योग साधको के लिए अपथ्य हैं अतः इसका सेवन नहीं करना चाहिए ।

पथ्य –

गोधूमशालियवषा ष्टिकशोभनान्नंक्षी राज्य खंडनवनीत सितामधूनि ।
शुंठीपटोलकफलादिकपंचशाकंमुद्रावि दिव्यमुदकंच यमींद्रपथ्यम् ।। 1/62

पुष्टं सुमधुरं स्निग्धं गव्यं धातुप्रपोषणम् ॥ मनोभिलषितं योग्यं योगी भोजनमाचरेत् ॥ 1/63 ।।

सुस्निग्ध एवं मधुर आहार,गेहूं , चावल , जौ , साठी चावल जैसे सुपाच्य भोजन ,दूध ,घी ,खंड, मक्खन ,मिश्री, मधु ,परवल जैसे फल तथा पांच प्रकार के शाक जीवंती, बथुआ, पुनर्नवा ,मेघनाथ(चौलाई), मूंग तथा वर्षा का जल सेवन करने को कहा गया है। व्यवहार के सन्दर्भ में हठप्रदीपिका में साधक को साधना के दौरान उचित आहार के साथ–साथ विहार का पालन करना चाहिए।

वह्निस्त्रीपथिसेवानामादौ वर्जनमाचरेत् ॥1/61 ।।

साधक तत्व– कुछ साधक तत्व है जो साधना मार्ग में साधक की सहायता करते हैं जिसका पालन करना चाहिए।

उत्साहात्साहसाद्वैयी तत्त्वज्ञानाच निश्चयात् ॥ जनसंगपरित्यागात्षभिर्योगः प्रतिद्धयति 1/16 हप्र.

1.उत्साह– स्वामी स्वात्मराम जी ने उत्साह को साधना मार्ग में प्रथम साधक तत्व माना है। अर्थात साधना के प्रति साधक के मन में उत्साह होना अति आवश्यक है। उत्साह के अभाव में साधक की साधना में मन नहीं लगता तथा आलस्य की उत्पत्ति हो जाती है।

2.साहस–साहस को जागृत किया जाना चाहिए। साहस साधक को कार्य करने के लिए प्रेरणा देता है। भीरू व्यक्ति कभी कोई लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता तथा असफलता ही हाथ लगती है। यदि साधक साधना में सिद्ध की इच्छा रखते हैं। तो उन्हें चाहिए कि वह साहसी बने ।

3.धैर्य –साधक को अपने साधन क्रिया को करते समय धैर्य रखना चाहिए। परिणाम की प्राप्ति हेतु प्रतीक्षा किया जाना चाहिए। अधिक उतावलापन का त्याग करना चाहिए। अपने किए गए प्रयास पर पूर्ण विश्वास करके परिणाम की धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए।

4.तत्व ज्ञान–तत्व ज्ञान अर्थात किसी वस्तु या पदार्थ के विषय में यथार्थ ज्ञान रखना चाहिए। किसी भी योग साधना पद्धति को अपनाने की विधि लाभ व सावधानियां तथा उसके प्रभावों के विषय में यथार्थ ज्ञान होना अति आवश्यक होता है। अविद्या एक क्लेश है तथा क्लेश साधना मार्ग में बाèाक होता है ।

5. दृढ़ संकल्प –किसी भी कार्य को करने हेतु सर्वप्रथम संकल्प होना आवश्यक होता है। संकल्प से एकाग्रता आती है, तथा संशय का नाश होता है। साधक संकल्प किए मार्ग में अग्रसर होता है , तथा सफलता प्राप्त करता है, दृढ़ संकल्प के अभाव में साधक विकल्पों का चयन करता है तथा वह मार्ग से भटक जाता है।

6. जनसंग परित्याग– जनसंघ का परित्याग अर्थात अधिक व्यक्तियों के संपर्क में रहने से योग साधना मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है। विभिन्न प्रकृति के लोग रहते हैं सात्विक राजसिक, तामसिक ,सात्विक प्रकृति वाले की संगति में रहना उचित है । परंतु राजसिक एवं तामसिक प्रभाव वाले व्यक्तियों का प्रभाव भी साधक पर पड़ता है। अतः जनसंग का परित्याग करना चाहिए।

बाधक तत्व –साधना काल में कुछ तत्व होते हैं जो साधना को बाधित करते हैं। अतः इनका त्याग करना चाहिए

अत्याहारः प्रयासश्च प्रजल्प नियमग्रहः ॥ जनसंगश्च लौल्यं च षड्भिर्योगो विनश्यति ।। 1/15 हप्र.

1. अत्याहार –अधिक मात्रा में भोजन ग्रहण करने पर उस भोजन के पाचन में अधिक शारीरिक ऊर्जा व्यय हो जाती है। तथा पाचन संस्थान खराब हो जाता है। फल स्वरुप मोटापा , आलस्य आदि की उत्पत्ति होती है। अतः अति आहार का त्याग कर मिताहार किया जाना चाहिए।

2. प्रयास– अधिक परिश्रम करने से शारीरिक क्षमता से अधिक परिश्रम अथवा बलपूर्वक प्रयास करने से शरीर की हानि हो सकती है। तथा साधना में अरुचि उत्पन्न हो सकती है। अतः अधिक परिश्रम का परित्याग करना चाहिए।

3. प्रजल्प– अधिक बोलना अर्थात योग साधको को शांत चित्त होने का अभ्यास करना चाहिए। अधिक दिनभर वार्तालाप करने से केवल मन की अस्थिरता तथा ऊर्जा का ह्रास होता है। अतः साधक को अनावश्यक विषयों पर विचार एवं वार्तालाप नहीं करना चाहिए ।

4.नियम आग्रह– नियमों का कठोरता से पालन नहीं किया जाना चाहिए । परिस्थिति के अनुसार उनमें तालमेल रखते हुए साधना कार्य को अग्रसर करना चाहिए। किसी एक ही नियम को कायम रखने हेतु हठ नहीं करना चाहिए उससे हानि हो सकती है।

5. जनसंघ– अधिक लोगों से संपर्क रखने पर एकांत का अभाव हो जाता है। अतः शोरगुल वातावरण में योग साधना में विघ्न उत्पन्न हो सकते है, अतः इसका परित्याग करना चाहिए।

6.लौल्यता (मन की चंचलता)– अर्थात् मन के चंचलता का त्याग किए बिना एकाग्रता प्राप्त नहीं किया जा सकता है। अतः चंचलता का त्याग कर मन को स्थिर रखने का प्रयास किया जाना चाहिए। मन की एकाग्रता ही साधना में सिद्धि का कारण होती है। अतः लौल्यता का त्याग करना चाहिए।इसी प्रकार का

मिताहार, पथ्य, अपथ्य और साधक तत्वों का वर्णन हठ रत्नावली में भी योगी श्रीनिवास जी ने किया है। शिवसहिंता और वशिष्ठ संहिता में भी में भी हठयोग साधना के लिए इसी प्रकार आहार विहार के सन्दर्भ में वर्णन मिलता है।

घेरंड संहिता के अनुसार आहार विहार– घेरंड संहिता में भी अन्य ग्रंथों की तरह मिताहार का वर्णन किया गया है तथा आहार विहार बताया गया है

शुद्धं सुमधुरं स्निग्धमधुरार्धविवर्जितम्। भुज्यते सुरसम्प्रीत्या मिताहारमिमं विदुः।।5/21 ।।

अन्नेन पूरयेदर्ध तोयेन तु तृतीयकम्। उदरस्य तृतीयांशं संरक्षेद्वायुचारण ।।5/22 ।।

आहार विहार–साधक को चावल, जौ का सत्तू, गेहूं का आटा, मूंग, उड़द, चना आदि को भूसी रहित स्वच्छ करके भोजन ग्रहण करना चाहिए।

परवल, कटहल और करेला, कुंदरु, अरबी ककड़ी, गूलर और चौलाई आदि शाक का सेवन करना बताया गया है कच्चे या पके केले के गुच्छे का दंड और उनके मूल बैंगन, ऋतु का साग परवल के पत्ते, बथुआ और हुरहुर का साग सेवन किया जा सकता है तथा स्वच्छ सुमधुर स्निग्ध और सूरस द्रव्य से संतोष पूर्वक आधा पेट ग्रहण करना आधा खाली रखना चहिए। तथा मधुर आहार जो संपूर्ण शरीर का पोषण करें और मन को आनंद देने वाला, गाय के दूध से बना हो ऐसा भोजन ग्रहण करने का विधान बताया गया है।

घेरंड संहिता में प्रत्याहार का वर्णन

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रत्याहारकमुत्तमम्। यस्य विज्ञानमात्रेण कामादिरिपुनाशनम् ।। 4/1

यतो यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम्। ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ।। 4/2

पुरस्कारं तिरस्कारं सुश्राव्यं वा भयानकम्। मनस्तमान्नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ।। 4/3

सुगन्धे वाऽपि दुर्गन्धे मनो घ्राणेषु जायते। तस्मात्प्रत्याहरेदेतदात्मन्येव वशं नयेत् ।। 4/4

मधुराम्लकातिक्तादिरसं गतं यदा मनः। तस्मात्प्रत्याहरेदेतदात्मन्येव वशं नयेत् ।। 4/5

मनुष्य को अपने शत्रुओं जैसे कामना ,इच्छा, तृष्णा आदि के प्रति अधिक उत्सुक नहीं होना चाहिए । मान ,अपमान आदि से प्रभावहीन रहना चाहिए। मन की चंचलता के विपरीत इसे स्थिर रखकर एकाग्रता का प्रयास करना तथा सुगंध एवं दुर्गंध से प्रभावित नहीं होने का प्रयास करना चहिए , सभी प्रकार के रसों से बचना चाहिए।

उपरोक्त प्राचीन साधना का वर्तमान सन्दर्भ में परिचर्चा –मानव जीवन में आध्यात्मिक उत्कर्षता एवं जीवन की पूर्णता मानव के साधना पद्धति पर निर्भर करता है। यह हठयौगिक साधना शारीरिक स्तर से लेकर आध्यात्मिक उत्कृष्टता के लिए उत्तम साधन मानी गई है। यह साधनाएं तभी सफल और पूर्ण मानी जाती हैं। जब इनको देश, काल, परिस्थिति एवं वातावरण के अनुसार नियम पूर्वक किया जाए। किंतु इन साधनों के बारे में हमारे हठयौगिक ग्रंथ और उपनिषदों में प्राचीन समय के संदर्भ में विधि विधान बतलाए गए हैं। प्राचीन समय के आधार पर उस समय का रहन–सहन, खान–पान, वातावरण, जल की उपलब्धता, खाने हेतु भोजन की उपलब्धता के साथ–साथ रहने हेतु कुटी, मठ, निवास स्थान और निवासी लोगों के संदर्भ में जानकारी दी गई है। यह सभी प्रकार की जानकारियां वर्तमान समय में भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी प्राचीन समय में थी। किंतु प्राचीन समय में इतना विकसित भौतिकवाद ना होने के कारण मानव पूर्ण प्राकृतिक जीवन यापन करता था। किंतु वर्तमान समय की परिस्थितियां प्राचीन समय से बहुत ही भिन्न है। इसलिए प्राचीन समय की साधना पद्धति को वर्तमान समय के साधन सामग्री आदि का उपयोग करके

निश्चित ही सफलता प्राप्त कर सकते हैं। आचार्य श्रीराम शर्मा जी ने सावित्री,कुण्डलिनी एवं तन्त्र में हठ साधना सम्बधी वर्तमान परिपेक्ष्य में विस्तार पूर्वक बताया है।वर्तमान समय की परिस्थितियों को हम निम्न प्रकार से बदलाव करके साधना को आसान बना कर सफलता के उच्च शिखर को भी प्राप्त कर सकते हैं।

हठयौगिक साधना के लिए वर्तमान संदर्भ में उपयुक्त स्थान – प्राचीन समय में साधना के लिए सुझाए गए स्थान वर्तमान समय में भी उतने ही प्रासंगिक हैं। उसी प्रकार सुंदर राज्य हो , धार्मिक प्रवृत्ति के लोग जहां रहते हो, उपद्रव रहित स्थान हो, जो सभी प्रकार के खान–पान से परिपूर्ण हो ऐसे स्थान का ही चयन करना चाहिए। किसी प्रकार से जंगल में गुफाओं , कंधराओं में, पर्वतों पर जाकर साधना करने की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि दूर देश में किसी पर कोई भरोसा नहीं रहता है। सभी प्रकार की विसंगतियां होती रहती हैं। दूर जंगल वह गुफा पहाड़ों पर तप करने से वहां पर लोगों से संपर्क कम हो जाता है। जिसके कारण यदि किसी प्रकार से कोई अचानक स्वास्थ्य में विकृति आती है, तो इसके संदर्भ में दूर–दूर तक कोई वहां पर संपर्क ना हो पाने के कारण साधक की साधना में अनेकों बाधाये उत्पन्न हो सकती हैं।

कुटी व मठ निर्माण– प्राचीन समय में लोगों का रहन–सहन व निवास प्राकृतिक रहता था। इसके संदर्भ में साधना हेतु कुटी के लिए घास फूस, पत्ते आदि के माध्यम से कुटी निर्माण की बात कही गई थी। जिसका द्वारा छोटा हो जो सभी प्रकार के बड़े हिंसक पशुओं से बचाने में सहायक हो ऐसी कुटी की बात कही गई थी। यह कुटी घास, फूस से बनी होने के कारण कुछ समय के बाद धीरे–धीरे नष्ट भी होने लगती थी । किंतु वर्तमान समय में कुट्टी बना पाना संभव नहीं है, क्योंकि कुटी के लिए ना तो उपयुक्त घास, फूस का इंतजाम हो पाएगा और ना ही मिट्टी का, इसलिए वर्तमान समय में हम पत्थर, चूना, सीमेंट , ईंट आदि से निर्मित पक्के मकान की तरह हम कुटी का निर्माण कर सकते हैं, जिसके ऊपर अच्छी छत और अच्छा सा द्वार रख सकते हैं। हवा आने के लिए अच्छे एयर कंडीशनर व्यवस्था भी बना सकते हैं। उसके चारों तरफ अच्छे सुगंधित पेड़ पौधे और छायादार वृक्षों को भी लगा सकते हैं।

कुटी के भूमि के सदर्भ में –कुटी की भूमि, की समतल अवस्था की बात की जाए तो प्राचीन समय में गोबर से लिपाई की जाती थी, जो छोटे बड़े जीव जंतु सांप, बिच्छू, चूहा आदि बिलों का निर्माण न कर सके। किंतु वर्तमान समय में गोबर की उपलब्धता न हो पाने के कारण, और वर्तमान समय की परिस्थिति के अनुसार हम वहां की मिट्टी को समतल करके अच्छे–अच्छे ग्रेनाइट, संगमरमर व टाइल्स आदि को लगाकर कुटी भूमि की सौंदर्यता और स्वच्छता बना सकते हैं।

प्रकाश के सन्दर्भ में–प्राचीन समय में उपयुक्त प्रकाश के लिए सूर्य की रोशनी और लकड़ी की अंगीठी आदि को जला कर प्रकाश के रूप में उपयोग किया जाता था, आंधी तूफान व बरसात होने के समय अंधेरों में ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था। जिससे अनेकों प्रकार की साधना में भी विघ्नता उत्पन्न होती थी। किंतु वर्तमान समय में विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक बल्ब, बिजली, इन्वेटर इत्यादि होने के कारण हम अपने कुटी में अच्छे बल्ब आदि का उपयोग करके उचित रूप से प्रकाश की व्यवस्था भी कर सकते हैं।

बेदी व मंडप के संदर्भ में –प्राचीन समय में बेदी व मंडप की स्थापना कुटी के बाहर एक वृक्ष के नीचे प्राकृतिक वातावरण में खुले आसमान के नीचे बतलाई गई है। किंतु वर्तमान समय में हम वैदिक मंडप के लिए एक उपयुक्त छोटे से कमरे का उपयोग कर सकते हैं जिस प्रकार रहने के लिए हम कुटी बनाते हैं। उसी प्रकार हम छोटी सी पत्थर, सीमेंट चुना, व ईंट आदि आपके माध्यम से पक्की बेदी को बनाकर हम

साधना कर सकते हैं। जिसे पूजा घर के रूप में जाना जाता है। साथ ही साथ पूजा उपासना के किए बेदी का भी उपयोग कर सकते है।

आसान (बिछावन)–जिस पर बैठकर योग साधना की जाती है। प्राचीन समय में मृगछाल, चैल, आजिल, कुश आदि का उपयोग आसनों (बिछावन) के रूप में किया जाता था वर्तमान में यह अप्राप्य है अतः मुलायम कपड़े से बने चटाई, योगा मैट , लकड़ी की पाटी का उपयोग आसन हेतु किया जा सकता है।

भोजन (आहार) के सन्दर्भ मे–यदि साधना के दौरान आहार की बात की जाए तो प्राचीन समय में बतलाए गए आहार ही सबसे उपयुक्त माने गए हैं आहार में किसी प्रकार से बदलाव की आवश्यकता नहीं है क्योंकि प्राचीन समय में ऋषि मुनियों ने वातावरण के साथ–साथ आहार चयन की बात कही थी जो साधना के लिए सबसे उपयोगी माने गए हैं। किंतु भारत उष्ण एवं शीत प्रकृति का देश है। अनेक ऐसे देश भी हैं, जो पूरी तरह से ग्रीष्म है, तो कई देश ऐसे हैं जो पूरी तरह से शीत प्रकृति से ग्रसित है, ऐसी परिथितियों में आहार का चयन हमें वहां के वातावरण के अनुसार करनी चाहिए। किंतु आहार हमेशा सात्विक और प्राकृतिक फल, फूल, साक आदि से ही संबंध होना चाहिए। आहार किसी प्रकार से वर्तमान समय में प्रचलित फास्ट फूड, सॉफ्टड्रिंक, चाय, कॉफी, पिज्जा, बर्गर, नूडल्स, चाउमीन , मैदे से बनी हुई खाद्य पदार्थ, मोमोज और डिब्बे बंद भोजन, विभिन्न प्रकार की बाजारों में उपलब्ध मिठाइयां, चाट, कचौड़ी, पाव भाजी, आदि को ग्रहण नहीं करना चाहिए। यह मन को दूषित, इंद्रियों को चंचल व चित्त को विक्षिप्त करने वाले आहार माने गए हैं। इसलिए ऐसे स्थान पर हो सके तो अधिक मात्रा में दूध, घी युक्त भोज्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए। और बादाम, काजू, मुगफली, खजूर, आखरोट, सभी प्रकार के मीठे रसीले फल, बादाम सेक, मिल्क शेक, आदि को उपयोग किया जा सकता है। इनको काफी समय तक स्टोर करके भी रखा जा सकता है। सबसे अधिक उपयुक्त मौसमी फलों और अनाजो को भोजन के रूप में उपयोग में लाना चाहिए।

जल के संदर्भ में– प्राचीन समय में हठयोग साधना हेतु हमेशा कुटी का निर्माण किसी जलाशय व नदियों के किनारे किए जाते थे। जिससे साधक को नहाने के लिए और पीने के लिए स्वच्छ जल की उपलब्धता आसानी से हो सके। इसलिए साधक कुटी के बाहर एक कूप (कुएं) का निर्माण भी करते थे। उस कुएं से जल को पीने, नहाने , सफाई के साथ–साथ पूजन सामग्री आदि के उपयोग करते थे। कई ग्रन्थों में वर्षा के जल को बहुत अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। बारिश के दिनों में नदियों, तालाबों और भूमिगत जल पूरी तरह से दूषित हो जाता हैं। क्योंकि विभिन्न प्रकार के मृत जीव, जंतु, कीट, पतंग आदि नदियों , तालाबो में मिलकर जल को दूषित कर देते हैं। और बारिश के दिनों में छोटे–छोटे जीव जंतु कुएं के जल में उत्पन्न होकर उसे दूषित कर देते थे। इसलिए पीने के लिए बारिश के दिनों में वर्षा के जल को बहुत ही महत्वपूर्ण माना गया है। वर्षा के जल को पूरे वर्ष के लिए एकत्र करके नहीं रख सकते। इसलिए बारिश के दिनों में वर्षा का जल पीने के लिए उपयोग में लाते थे। किंतु वर्तमान समय में पर्यावरण प्रदूषण अधिक होने के कारण जल भी प्रदूषित हो गया। समस्त नदियां, तालाबों व कुएं आदि का जल पूरी तरह से दूषित हो गया है। जिसको पीने से विभिन्न प्रकार के शारीरिक रोग होने की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए वर्तमान समय में जल को पीने के लिए नलकूप (भूतल, जल) विद्यत मोटर इत्यादि का उपयोग करके उसे (आर ओ) आदि के माध्यम से प्यूरिफाई करके पीने के रूप में उपयोग कर सकते हैं। साधक को किसी तालाब व नदी में जाने की कोई आवश्यकता नहीं साधक नलकूप के माध्यम से कपड़े, धुलने, नहाने और पानी पीने के रूप

में उपयोग कर सकते हैं। जो सभी प्रकार से सुरक्षित व स्वच्छ रूप से हमें ताजा जल भी प्राप्त हो सकता है।

वर्तमान परिपेक्ष्य में रहन–सहन व व्यवहारगत साधक बाधक तत्व – व्यवहार को परिष्कृत करने वाली साधक बाधक तत्वों की बात कहीं जाए तो साधना में बहुत ही उपयोगी मानी गई हैं। क्योंकि जिन साधक तत्वों को अपनाने से साधना सफल होती है। उसी प्रकार बाधक तत्वों को छोड़ना ही अनिवार्य माना गया है। प्राचीन ग्रंथो में उत्साह, साहस, धैर्य तत्व ज्ञान, नित्य प्रति स्वाध्यय, सज्जनों की संगति, वृद्धों की सेवा, आपसी प्रकृति प्रेम और सहकार इन सबको साधक श्रेणी में रखा गया है। इसके साथ–साथ में अधिक आहार, प्रजल्प , नियमों में अधिक आग्रह, लोक संपर्क, मन की चंचलता, स्त्री प्रसंग, भोग, विलासिता, इन सभी को बाधक माना गया है। ये तो साधक और बाधक तत्व पहले भी उतने ही प्रासंगिक थे, और आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। किंतु वर्तमान समय में इसके अलावा अन्य और भी बाधक तत्व भी हमारे समाज में समय के अनुरूप बढ़ते चले गए इसलिए हमें वर्तमान की परिस्थिति के अनुसार बाधक तत्वों को ध्यान में रखते हुए उनसे हमेशा दूर रहना चाहिए। जैसे, अधिक मोबाइल, टेलीविजन, रेडियो, वाहन, बड़े घर, मोटर गाड़ी, लोक प्रशंसा, पेशा, पद, धन, संपत्ति, लालच आदि ये सभी हमारे व्यवहार को पूरी तरह से विकृत करके साधना पद्धति को बाधित करते हैं। इसलिए इन सभी प्रकार के बाधक साधनों से दूर रहना चाहिए। यदि हम इन सभी का नियमों का अच्छे से पालन करते हैं। तो निश्चित ही वर्तमान समय में हम प्राचीन बताई गई साधना पद्धतियों को आसानी से अपना कर उनके लाभों को वर्तमान समय में ले सकते हैं और अपने जीवन को सफल बना सकते हैं।

निष्कर्ष–इस प्रकार उपरोक्त चर्चा से ज्ञात हुआ कि प्राचीन समय की हठयोग साधना को वर्तमान समय के परिपेक्ष में आसानी से किया जा सकता है। प्राचीन समय के नियमों को हम वर्तमान समय के परिस्थितियों देश, काल, वातावरण, के निमित्त बदलाव करके आसानी से अपना सकते हैं। क्योंकि वर्तमान समय के बदलते परिवेश में उन साधनाओं के लिए प्राचीन समय की बताई गई साधना पद्धतियां, मठ, कुटी, स्थान, आहार विहार, रहन–सहन , खान पान और जल के संदर्भ में जो बातें बतलाई गई थी। उनको हम वर्तमान समय के बदलते परिपेक्ष में अपना कर हम उसे साधना को आसानी से अपना सकते हैं। प्राचीन समय के साधक बाधक तत्व भी उस समय जितने प्रासंगिक थे और आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। किंतु वर्तमान समय में बदलते परिवेश के कारण अनेक साधन तत्वों को भी जोड़ना अति आवश्यक है, और वर्तमान समय के अनेक बाधक तत्वों को भी जानकारी प्राप्त करके उन्हें दूर करना चाहिए। तभी हम उसे साधना के सर्वोच्च स्तर पर पहुंचकर इसका लाभ ले सकते हैं। यदि प्राचीन परंपरा का निर्वहन करते रहे और वर्तमान स्थिति को ध्यान में ना रखा जाए तो हमें विभिन्न प्रकार की बीमारियों से भी ग्रसित होना पड़ सकता है। और साधना से परिणाम की अपेक्षा हानि अधिक हो सकती है। इसलिए हमें वर्तमान समय के परिपेक्ष में प्राचीन समय की बतलाई गई नियमावली को ध्यान में रखते हुए। आसानी से इस साधना को सर्वसुलभ बनाकर इसके संपूर्ण लाभों को वर्तमान समय में भी लिया जा सकता है। और उसे साधना को उतने समय में ही फलदाई बनाया जा सकता है। प्राचीन समय में साधना करने में अधिक समय लगता था। इसलिए हमें बदलते परिवेश में साधना की विभिन्न प्रकार की बदलती हुई परिस्थितियों और नियमावली को समय के अनुसार अपनाकर ही साधना करनी चाहिए तभी हम इसमें सही अर्थों में सफल हो सकते हैं।

संदर्भ सूची–

1. सरस्वती निरंजनानंद, घेरंड संहिता, योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत (2004) पृष्ठ संख्या 287,296।
2. स्वतमाराम, हठ प्रदीपिका, कैवल्यधाम, श्रीम्नमाधव योगसमिति, लोनावाला, पुणे, महाराष्ट्र (2013) पृष्ठ संख्या 6,7,8,29,37.
3. श्रीनिवासयोगी, हठरत्नावली (हिंदी अनुवाद) ओम श्री डिवाइन पब्लिकेशन, सिरसा, हरियाणा भारत।(2018) पृष्ठ संख्या19,20,21,22
4. स्वामी महेशानंद ,शर्मा बी., सहाय जी. ,बोधे आर., शिवसंहिता (एक आलोचनात्मक संस्करण), कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योगमन्दिर समिति, लोनावाला, पुणे, महाराष्ट्र भारत।(1999) पृष्ठ संख्या108,109,110,111
5. शर्मा एस. ,108 उपनिषद,ज्ञानखण्ड,श्वेतास्वतर उपनिषद ,युग निर्माण योजना, विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि , मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत। (2010)पृष्ठ संख्या 411,118
6. शर्मा एस. ,108 उपनिषद, साधनाखंड, योगचूडामण्युपनिषद, युग निर्माण योजना, विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि , मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत।(2010). पृष्ठ संख्या 213,214
7. शर्मा एस.,108 उपनिषद, साधनाखंड, योगकुण्डल्युपनिषद,युग निर्माण योजना, विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि , मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत।(2010). पृष्ठ संख्या 115